आनन्दमार्ग चर्याचर्य

(द्वितीय खण्ड)

प्रवक्ता और प्रवर्त्तक

श्री श्री आनन्दमूर्ति

आनन्दमार्ग प्रचारक संघ (केन्द्रीय) कर्तृक सर्वसत्व संरक्षित

रजिष्टर्ड ऑफिस : आनन्दनगर, पो० वागलता, जिला-पुरुलिया, प० बं०

सम्पर्क कार्यालय : ५२७ वी.आई.पी.नगर, तिलजला, कलिकाता- ७०० १००

प्रथम संस्करण : वैशाखी पूर्णिमा, १९५६

अष्टम संस्करण : वैशाखी पूर्णिमा, १९९४

नवम मुद्राकंन : फाल्गुनी पूर्णिमा, १९९८

द्वादश मुद्राकंन: : अक्टोवर, २००९

त्रयोदश मुद्राकंन : मे, २०२३

प्रकाशक : आचार्य सर्वात्मानन्द अवधूत (केन्द्रीय प्रकाशन सचिव) आनन्दमार्ग प्रचारक संघ ५२७, वी.आई.पी. नगर, कलिकाता - ७०० १००

मुद्राकर : आचार्य अभिव्रतानन्द अवधूत
आनन्द प्रिन्टर्स ३/१सि,
मोहनवागान लेन कलिकाता -
७०० ००४
प्राप्तिस्थान : आनन्दमार्ग प्रचारक संघ ५२७,
वी.आई.पी. नगर कलिकाता
७०० १००

ISBN-81-7252-137-5
Price Rs. 20/- only.

चरम निर्देश

“जो दोनों समय नियमित रूप से साधना करते हैं , मृत्युकाल में परमपुरुष की भावना उनके मन में अवश्य ही जगेगी और निश्चित रूप से उनकी मुक्ति होगी ही । अतः प्रतयेक आनन्दमार्गी को दोनों समय साधना करनी ही होगी - यही है परमपुरुष का निर्देश । यम - नियम के बिना साधना नहीं हो सकती । अतः यम - नियम का पालन करना भी परमपुरुष का ही निर्देश है । इस निर्देश की अवहेलना करने का अर्थ है कोटि - कोटि वर्षों तक पशुजीवन के क्लेश में दग्ध होना । किसी भी मनुष्य को उस क्लेश में दग्ध होना नहीं पड़े तथा परमपुरुष की स्नेहच्छाया में सभी आकार शाश्वती शान्ति लाभ करें , इसलिए सभी मनुष्यों को आनन्दमार्ग के कल्याण - पथ पर लाने की चेष्टा करना भी प्रत्येक आनन्दमार्गी का कर्त्तव्य है । दूसरों को सत्पथ का निर्देशन करना साधना का ही अंग “

श्री श्री आनन्दमूर्ति

रोमन संस्कृत वर्णमाला

विभिन्न भाषाओं का ठीक - ठीक उच्चारण करने के लिए तथा द्रुतलेखन के प्रयोजन को समझकर निम्नलिखित पद्धति से रोमन संस्कृत वर्णमाला का प्रवर्त्तन किया गया है

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ॠ	ऌ	ॡ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः	
অ	আ	ই	ঈ	উ	ঊ	ঋ	ৠ	ঌ	ৡ	এ	ঐ	ও	ঔ	অং	অঃ	
a	á	i	ii	u	ú	r	rr	lr	lrr	e	ae	o	ao	am	ah	

क	ख	ग	घ	ङ	च	छ	ज	झ	ञ
ক	খ	গ	ঘ	ঙ	চ	ছ	জ	ঝ	ঞ
ka	kha	ga	gha	uṇa	ca	cha	ja	jha	iṇa

ट	ठ	ड	ढ	ण	त	थ	द	ध	न
ট	ঠ	ড	ঢ	ণ	ত	থ	দ	ধ	ন
́ta	́tha	́da	́dha	́na	ta	tha	da	dha	na

प फ ब भ म

প ফ ব ভ ম

Pa pha ba bha ma

य र ल व

য র ল ব

ya ra la va

श ष स ह क्ष

শ ষ স হ ক্ষ

sha śa sa ha kśa

अँ ज्ञ ऋषि छाया ज्ञान संस्कृत ततोऽहं

অঁ জ্ঞ ঋষি ছায়া জ্ঞান সংস্কৃত ততোऽহং

aṋ jiṋa rśi cháya jiṋána saḿskrta tato'haḿ

a á b c d d́ e g h i j k l m ḿ n

ń ṋ o p r s ś t t́ u ú v y

समग्र विश्व में बहुत प्रचारित रोमन लिपि के २९ अक्षर

मात्र से संस्कृत भाषा का ठीक - ठीक उच्चारण किया जाना

सम्भव है । इसमें युक्ताक्षर का भी झमेला नहीं है । अरबी , फारसी और अन्यान्य f, q , gh , z , प्रभुति अक्षरों का प्रयोजन रहता है , संस्कृत में नहीं । शब्द के मध्य या शेष में ' ड ' , ' ढ ' यथाक्रम ' ड़ ' और ' ढ़ ' ' रूप में उच्चारित होते हैं । ' य ' (जहाँ ' य ' का उच्चारण ' इ ' , ' अ ' होता है) के समान वे भी कोई स्वतंत्र वर्ण नहीं हैं । प्रयोजन के अनुसार और असंस्कृत शब्द लिखने के समय ŕa और ŕha व्यवहार किया जा सकता है ।

गैर- संस्कृत शब्द लिखने के लिए दिए गए दश अतिरिक्त अक्षर

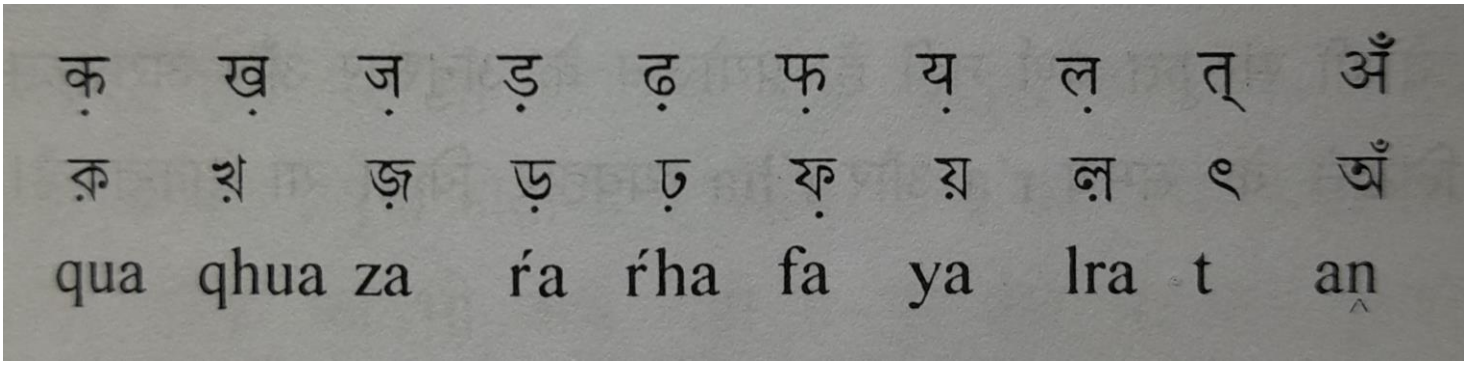

वराभय और जानुस्पर्श मुद्राओं के प्रवर्त्तन के द्वारा श्री श्री आनन्दमूर्त्तिजी ने जिस शक्ति-स्पन्दन की सृष्टि की है, तुमलोग उसी का सहारा लेकर अपने को और जगत् को कल्याण के पथ पर लेकर आगे बढ़ो। ॐ शान्ति।

आनन्दमार्ग मनुष्य मात्र का मार्ग है। मनुष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर, उसके मन की बात समझ कर ही इस मार्ग का प्रतिपादन किया गया है। इसके संबंध में यही सबसे बड़ी बात है,

इति

श्री प्रभातरंजन सरकार

।। मिलित ईश्वर प्रणिधान ।।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

देवा भागं यथा पूर्वे संजानानां उपासते ।।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।

समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ।।

।। गुरूवंदना ।।

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।

तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।

चक्षुरून्मिलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।

गुरूरेव परमब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ।।

****

नित्यानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम् ।

विश्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादि लक्ष्यम्।।

एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षी भूतम् ।

भावातीतं त्रिगुणरहितं सदगुरुं त्वं नमामि ।।

सूचीपत्र

साधना शरीर समाज प्रतिष्ठानोंके कर्मचारी गृहस्थ चिकित्सक राजनैतिक कार्यकर्त्ता निर्वाचकमण्डली दण्ड विधान अपराधका मात्राभेद सेवा और सहिष्णुता प्रीतिभोज आपदन्न श्राद्धान्न कृषि सहायक पारिवारिक सहायक विविध पञ्चदश शील आचरण विधि षोडश विधि सामाजिक आचार

साधना

आनन्द मार्गियों के अवश्यकरणीय - (फर्ज)

(क) एक निराकर, अनादि, अनन्त परम ब्रह्म जीवों के एकमात्र आराध्य हैं- वे ही जगत् गुरु हैं, आनन्दमूर्तिजी के नाम रूप के माध्यम से हम लोगों में उन्होंने ही ब्रह्म विद्या का प्रकाश किया है। उनका माहात्म्य जीवों को समझाना ही होगा।

(ख) स्वस्थ अथवा अस्वस्थ अवस्था में सोकर, बैठकर अथवा गाड़ी में दिन में कम से कम दो बेला पूर्ण ईश्वर-प्रणिधान करना ही होगा। निकट भविष्य में कोई अत्यन्त जरूरी काम रहे या न रहे एवं मन चंचल रहे या

न रहे सभी साधक पहले अस्सी बार गिनकर जप करेंगे और उसके बाद बिना गिनती किये यथाविधि जब तक इच्छा हो इष्ट मन्त्र का जप करेंगे।

प्रातःकालीन ईश्वर प्रणिधान न करने तक आहार ग्रहण नहीं करोगे। उसी प्रकार संध्याकालीन ईश्वर-प्रणिधान न करने तक संध्याकालीन आहार ग्रहण नहीं करोगे।

(ग) यम-नियम के विधि-निषेधों को सभी अवस्थाओं में मानकर चलना ही होगा।

सूचीपत्र

यम पाँच प्रकार के हैं

(1) अहिंसा (2) सत्य (3) अस्तेय (4) ब्रह्मचर्य (5) अपरिग्रह ।

(1) **अहिंसा** - मन, वाक्य और कार्य के द्वारा जगत के किसी प्राणी को पीड़ित नहीं करने का नाम अहिंसा है।

(2) **सत्य** - दूसरों के हित के उद्देश्य से मन और वाक्य का जो यथार्थ भाव है वही सत्य है।

(3) **अस्तेय** - बिना पूछे दूसरों का द्रव्य ग्रहण करने की इच्छा का त्याग करने का नाम अस्तेय है । अस्तेय का अर्थ है- अचौर्य-चोरी न करना।

(4) **ब्रह्मचर्य** - मन को सर्वदा ब्रह्म में रत रखने का नाम ब्रह्मचर्य है।

(5) **अपरिग्रह** - देह रक्षा के निमित्त जो प्रयोजनीय है उसके अतिरिक्त सभी कुछ का त्याग करने का नाम अपरिग्रह है।

नियम पाँच प्रकार के हैं -

(1) शौच (2) सन्तोष (3) तप: (4) स्वाध्याय (5) ईश्वर प्रणिधान ।

(1) **शौच** - दो प्रकार का है शारीरिक स्वच्छता और मानसिक स्वच्छता। मानसिक स्वच्छता के उपाय हैं- जीवों पर दया दान, परोपकार और कर्त्तव्यरत रहना ।

(2) **सन्तोष** - अयाचित रूप में (बिना मांगे) जो मिले उसी में तृप्त रहने का नाम सन्तोष है; हमेशा मन को प्रफुल्लित रखने की चेष्टा करना आवश्यक है।

आनन्दमार्ग चर्याचर्य

(3) **तपः** उद्देश्य साधन के लिये शारीरिक कृच्छसाधन का नाम है तप । उपवास, गुरुसेवा, माता-पिता की सेवा, चार प्रकार के यज्ञ, , जैसे- पितृ यज्ञ, नृ यज्ञ, भूत यज्ञ और अध्यात्म यज्ञ, तप के अभिन्न अंग हैं। छात्रों के लिए, अध्ययन ही तप का प्रधान अंग है। -

सूचीपत्र

(4) **स्वाध्याय**- अर्थ समझकर, धर्मशास्त्र और दर्शन शास्त्र के पाठ का नाम स्वाध्याय है। आनन्दमार्ग में दर्शन शास्त्र और धर्मशास्त्र क्रमश: 'आनन्द सूत्रम' और 'शुभाषित संग्रह' (सभी खण्ड) हैं। सत्संग और नियमित धर्मचक्र में उपस्थित रहने से भी स्वाध्याय का कार्य सम्पन्न होता है किन्तु इस प्रकार का स्वाध्याय केवल पाठ-ग्रहण में अक्षम लोगों के लिये ही प्रयोजनीय है।

(5) **ईश्वर-प्रणिधान** - सुख में, दुख में, सम्पद और विपद में ईश्वर में दृढ़ विश्वास रखना एवं जागतिक समस्त कार्यों में अपने को यन्त्र और ईश्वर को यन्त्री मानकर चलना ।

*　　*　　*　　*　　*　　*

(1) किसी भी जीव को अनाहर मरने न देना होगा। जातशत्रु को भी अनाहार नहीं मारोगे और विकृताङ्ग करके छोड़ न दोगे।

(2) स्वस्थ अवस्था में साप्ताहिक धर्मचक्र में योगदान करना ही होगा। राजकार्य या रोगी की सेवा के लिए यदि कोई निर्दिष्ट समय में धर्मचक्र में योगदान न कर सके तो उस दिन किसी भी समय जागृति में आकर ईश्वर- प्रणिधान कर लोगे। यदि वह भी संभव न हो तो सप्ताहान्त में एक बेला उपवास करोगे।

(3) जब मन शुद्धि के लिये उपवास करोगे तब अपना अन्न भाग किसी पथिक को बुलाकर खिलाओगे । पीने के पानी से तरुमूल का सिंचन करोगे।

(4) याद रखो, जगत् के प्रत्येक प्राणी के प्रति तुम्हारा कर्तव्य है - देय है - किन्तु तुम्हारे प्रति किसी का कर्तव्य नहीं है, किसी से कुछ पाना नहीं है।

(5) पशु का जीवन भोग के लिये है, मनुष्य का जीवन साधना के लिये है। किन्तु साधना करने के लिये शरीर तो चाहिए- इसलिये शरीर रक्षा के लिये जगत के सभी कुछ की ओर ध्यान रखकर चलना होगा।

(6) सभी वस्तुओं की एक भित्ति रहनी चाहिए जीवन की दृढ़ भित्ति न होने पर वह साधारण झंझावात में ही गिर पड़ता है। ब्रह्म भित्ति ही दृढ़तम भित्ति है।

(7) धर्म अन्दर की वस्तु है। जो अन्तःसार शून्य हैं वे ही भीतर की शून्यता को ढँकने के लिये काँसे का घण्टा, ढाक-ढोल बजाकर चारों और शोरगुल मचाते हैं।

(8) "मैं कुछ भी न जान सका" यह मनोभाव जिसमें नहीं है वह कुछ भी जान नहीं सकता। यह मनोभाव ही शिक्षार्थियों की एकमात्र अपरिहार्य योग्यता है।

(9) मानव जीवन क्षण स्थायी है। साधना संबंधी शिक्षा शीघ्र पूरी कर लेना ही बुद्धिमान का काम है।

(10) मन का विकाश जहाँ स्वार्थपरता, संकीर्णता या कुसंस्कारों के द्वारा गतिरुद्ध नहीं होता, उसी का नाम मुक्ति है।

(11)

जा बलो जा करो, कभू भूलो ना को तारे

तार नाम हृदे धरि, ताँरइ काज मने करि,

आनन्दे डूबिया रहो कर्मे सागरे ।

(12) छोटा-बड़ा प्रत्येक कार्य के भीतर से मनुष्यत्व का उद्‌बोधन करना होगा। व्यापक रूप में मनुष्यत्व ही देवत्व है। उसकी पूर्णता ही ब्रह्‌मत्व है। साधक यह बात क्षण भर के लिये भी न भूलें।

(13) अपने दोष स्वयं पकड़ने पर, अन्य कोई भी

दण्ड प्राप्त करने का उपाय न रहने पर, उपवास के द्‌वारा मनः शुद्धि कर लोगे।

(14)किसी दोष के कारण किसी का तिरस्कार करने के पूर्व देख लोगे कि तुम में वह दोष है या नहीं ।

(15) यम-नियम में प्रतिष्ठित होने पर मन से अष्टपाश हट जायेंगे। जिसमें पाश नहीं है उसमें कुसंस्कार नहीं रह सकते।

(16)तर्क करके अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित नहीं की जाती। श्रेष्ठता प्रमाणित होती हैं कर्म के द्वारा।

(17)दूसरों को छोटा दिखाकर अपने को बड़ा बनाने की चेष्टा मत करो- कारण उससे दूसरे की क्षुद्रता ही तुम्हारे मन में घर कर लेगी।

(18) निन्दा को प्रशंसा के द्वारा और अंधकार को आलोक के द्वारा जय करोगे।

(19) जो वस्तु जैसी हो उसे उसी ढंग से न कहकर दूसरे ढंग से कहने का नाम अपवाद देना है।

इसलिए अनादि, अनन्त, निराकर ब्रह्म के नाम पर मूर्ति-पूजा करने का अर्थ जान-बूझकर उसे अपवाद देना है। तुमलोग इस महापाप को प्रश्रय नहीं दोगे।

(20) प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा और ध्यान के द्वारा रिपु वशीभूत होते हैं। याद रखोगे- पाश या रिपु को अपने वश में लाना होगा, तुम उसके अधीन में नहीं रहोगे। जैव धर्म के अंग के रूप में जीवित मनुष्यों के पाश* या रिपु* रहेंगे ही।

(21) जगत् की अधिकांश निन्दा का आश्रय है झूठ कोई नासमझी के कारण निन्दा करता है, कोई क्षुद्र स्वार्थ के आघात के कारण और कोई मात्र हिंसावृत्ति के वशीभूत

होकर। ठण्डे दिमाग से निन्दक को यही बात समझा दोगे, किन्तु किसी को इस प्रकार समझाने के पहले देख लोगे कि

[* पाश - आठ हैं :- घृणा, शंका, भय, लज्जा, युगुप्सा, कुल, शील और मान ।

* रिपु - छः हैं :- काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ एवं मत्सर्य।]

उक्त निन्दा का एक आना भी सत्य है या नहीं। अपना सामान्य दोष रहने पर भी मुँह बंद कर सभी बातें सहन कर लोगे एवं भूल दिखाकर सहायता करने के कारण उसे धन्यवाद देकर दण्ड की भिक्षा माँगोगे

(22) हमेशा याद रखोगे कि तुम्हारे इष्ट, आदर्श, चरमनिर्देश और आचरण-विधि की निन्दा करने पर या विरुद्ध में किसी के कुछ कहने पर उसे कभी युक्ति देकर

समझाने नहीं जाओगे, इस प्रकार की परिस्थिति में कठोर और अनमनीय मनोभाव का परिचय दोगे।

सूचीपत्र

शरीर

(1) देवालय के समान शरीर को सदा साफ-सुथरा ।

(2) पेशाब करने के अन्त में जल का व्यवहार करोगे या जिस किसी भी प्रकार शौच-क्रिया कर लोगे।

(3) दोनों बेला साधना के पूर्व या जिस किसी समय साधना के पूर्व स्नान करोगे या व्यापक शौच क्रिया कर लोगे ।

(4) भोजन और शयन के पूर्व शीतल जल से या अति शीतकाल में हल्के गर्म जल से व्यापक शौच क्रिया कर लोगे ।

व्यापक शौच क्रिया के नियम :-

पहले उपस्थ धो लो, बाद में हाथों की केहनियों और पैरों के घुटनों से नीचे का भाग धो लो, उसके बाद मुँह में जल भरकर हाथ में पानी लेकर कम-से-कम 12 बार आँखों और मुँह पर छीटें लगाओ। अन्त में कान और कंधे को धो लो। साथ ही साथ नासापान भी करोगे (अवश्य ही पेट खाली रहने पर);

(5) एकादशी में पूर्ण उपवास (निर्ज़ला) अवश्य करना है। इसके अतिरिक्त महीने में और भी दो दिन अर्थात् पूर्णिमा और अमावस्या को भी इच्छा रहने पर उपवास किया जा सकता है। संन्यासियों के लिए एकादशी, पूर्णिमा और अमावस्या को अत्यन्त आवश्यक रूप से उपवास करना ही होगा।

समाज

(1) भोजन करने के पहले पता लगा लोगे कि वहाँ उपस्थित व्यष्टियों में से कोई ऐसा तो नहीं है जिसने भोजन न किया हो। किन्हीं के अभुक्त रहने पर जब तक वे प्रसन्न होकर अनुमति न दें तब तक भोजन ग्रहण न करोगे।

(2) तुम्हारे पास जो कुछ भी खाद्य हो उसे वहाँ उपस्थित मार्ग के सबों के बीच समान रूप में बाँटकर खाओगे। किन्तु यदि कोई किसी कारण से खाने की अनिच्छा प्रकट करें वह अलग बात है, उसके लिए तुम्हें प्रत्यवायग्रस्त नहीं होना है। असुविधा में पड़ना नहीं है।

(3) सभी से प्रेम करोगे, सभी का विश्वास करोगे, किन्तु जो यमनियम में प्रतिष्ठित नहीं हैं उसे कोई दायित्व नहीं दोगे।

(4) विज्ञान मनुष्य का शत्रु नहीं है। मनुष्य का शत्रु है अविद्या । सर्वदा कड़ी नजर रखो जिससे विज्ञान चर्चा मात्र उन्हीं के हाथों रहे जो यम-नियम में प्रतिष्ठित हों।

(5) कपटाचारी किसे कहते हैं-

(क) जो मिथ्या को प्रश्रय देता है।

(ख) जो उपकारी का उपकार स्वीकार नहीं करता ।

(ग) जो वादा करके उसे निभाता न हो।

(घ) जो विश्वासघात करता हो।

(ङ) जो पीठ पीछे निन्दा करता हो।

(6) कपटाचारी के साथ सामयिक सन्धि कर सकते हो। किन्तु उसका स्वभाव संशोधन न होने तक उसे क्षमा नहीं करोगे। यों ही क्षमा कर देना एक प्रकार की मानसिक दुर्बलता

है। उससे समाज का घोरतर अनिष्ट होता रहा है। जो मन ही मन जाति भेद, साम्प्रदायिकता, प्रादेशिकता या

जातीयता का भाव पोषण करते हैं एवं मुँह से विश्व भ्रातृत्व की बड़ी-बड़ी बातों का प्रचार करते हैं वे भी कपटाचारी हैं।

(7) दुर्बल और असहाय की सभी प्रकार से रक्षा करोगे ।

(8) नारी-मर्यादा की रक्षा हर हालत में किये चलोगे। कभी भी यह न सोचोगे कि उक्त नारी किस जाति या धर्म की है।

(9) किसी के भी धर्म-विश्वास पर कभी भी आघात न करोगे। उसे धीरे-धीरे युक्तिपूर्वक समझाओगे । यदि आघात करते हो, तो समझो कि वह आघात तुमने आनन्दमार्ग पर ही किया।

(10) पेशागत, अर्थगत या जन्मगत जाति भेद मनुष्य-सृष्ट है। तुम लोग उसे किसी भी हालत में प्रश्रय नहीं दोगे। निहित स्वार्थवादीगण जाति भेद की पृष्ट-पोषकता करते हैं।

(11) आचार्य की अस्तित्व रक्षा हेतु प्रयोजनानुसार सभी प्रकार का त्याग स्वीकार करोगे ।

(12) किसी को विपन्न देखकर भी यदि कोई सहायता के लिये अग्रसर न हो तो वह मनुष्य नाम के अयोग्य है - आनन्दमार्ग का कलङ्क है।

(13) आनन्दमार्गियों की एकता किसी भी तरह नष्ट होने न दोगे। अपने जीवन को विपन्न करके भी एकता की रक्षा करोगे।

(14) अगर कोई आनन्दमार्गी किसी अन्य आनन्दमार्गी के विरुद्ध हिंसात्मक कार्यकलापों में संलग्न हो तो जब तक

उसके स्वभाव का संशोधन न हो जाए तब तक वह आनन्दमूर्तिजी का अभिशाप भाजन बनकर रहेगा।

(15) कृषि, शिल्प, वाणिज्य और उन्नयनमूलक सभ प्रकार के कार्य सामूहिक आधार पर करोगे।

(16) सूक्ष्म कला जीव को अतिन्द्रियत्व की ओर ले जाती है, इसलिये साधक ललित कला को निरुत्साहित तो करेंगे ही नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समर्थन करेंगे ।

(17) कलाविद् समाज के बहुत बड़े मित्र हैं। इसलिए उनकी रक्षा के लिये सक्रिय व्यवस्था करोगे। उदाहरण के लिये किसी नाटक का या उसके अनुवाद का अभिनय करने के पूर्व उस नाटक के मूल लेखक को उसकी जीविका-निर्वाह के लिये एक दिन के व्यय के लिये अवश्य ही दक्षिणा दोगे ।

(18) टिकट लगाकर किसी अभिनय या कलाचर्चा का आयोजन करने पर उक्त अनुष्ठान के मूल व्यय को घटाकर बाकी धन-राशि की आधी रकम परिश्रम के अनुपात में और बाकी आधी रकम गुरुत्व के अनुपात में कलाविदों के बीच बाँट दोगे ।

(19) दूसरों का दोष जहाँ तक सम्भव हो क्षमा कर दोगे। यदि देखो कि किसी का आचरण समाज विरोधी है तो किसी कठोर व्यवस्था का अवलम्बन करके उसके स्वभाव संशोधन की चेष्टा करोगे। याद रखोगे वह तुम्हारा शत्रु नहीं है, उसका आचरण तुम्हारे समाज का शत्रु है।

(20) पितृ ऋण, मातृ ऋण, आचार्य-ऋण और गुरु ऋण (देव ऋण) ये चार प्रकार के ऋण हैं जिनका परिशोध नहीं होता (चुकाया नहीं जा सकता) ।

(क) पिता के देहान्त के बाद पितृ सेवा की एक मात्र पद्धति है विश्व के प्रत्येक पुरुष चरम विकाश के पथ पर ले जाने में सहायता करना ।

(ख) माता के देहान्त के बाद मातृ सेवा की एकमात्र पद्धति है विश्व की प्रत्येक नारी को चरम विकाश के पथ पर ले जाने में सहायता करना ।

(ग) आचार्य और उनके परिवार की सुख-शान्ति की ओर ध्यान रखकर काम करना ही आचार्य की श्रेष्ठ सेवा है।

(घ) मार्ग- -गुरु के अभीष्ट कार्य करते जाना ही गुरु की श्रेष्ठ सेवा है। किन्तु जितनी भी सेवा करो मोक्ष लाभ नहीं करने तक इन चार प्रकार के ऋणों का परिशोध नहीं होगा।

(21) सेवा चार प्रकार की है - शूद्रोचित, क्षत्रियोचित, वैश्योचित और विप्रोचित। इसे ही नृयज्ञ कहते हैं। शारीरिक परिश्रम के द्वारा रोगी की सेवा, शव-संस्कार, आर्त्त त्राण

और सभी प्रकार के उन्नयनमूलक कार्य शूद्रोचित सेवा है। अर्थ और अन्नजलादि के द्वारा जीव-समूह की रक्षा करना वैश्योचित सेवा है।

अपनी शक्ति, सामर्थ्य और साहस के द्वारा विपन्न का उद्धार, विपथगामी को सत्पथ पर आने के लिये बाध्य करना क्षत्रियोचित सेवा है।

पराज्ञान की सहायता से मानव समाज के मानसिक तथा आध्यात्मिक उन्नति से सहायता करना विप्रोचित सेवा है।

याद रखना होगा प्रत्येक सेवा का मूल्य बराबर है। जब जिस सेवा का सर्वाधिक प्रयोजन हो उस समय वही करनी होगी।

शास्त्र में लिखा है, विप्र विराट पुरुष के मस्तक स्वरूप, क्षत्रिय बाहु स्वरूप, वैश्य मध्य देश स्वरूप और शूद्र पद-द्वय स्वरूप हैं। अतएव विचार कर देखो - क्या चारों ही प्रयोजनीय

नहीं है। सिर पैर को नियन्त्रित करता है और पैर के ही बल सिर खड़ा है।

विप्रोचित सेवा का फल चिरस्थाई होता है। बाकी तीनों का फल अस्थायी होता है। किन्तु फिर भी स्मरण रखना होगा, अवस्था विशेष में क्षत्रिय, वैश्य या शूद्रोचित सेवा ही एकमात्र पथ है - वहाँ विप्रोचित सेवा सर्वथा मूल्यहीन है।

(जीवों की भित्ति जिस प्रकार ब्रह्म है, समाज की भित्ति उसी प्रकार शूद्र है, इसलिये जो अच्छा शूद्र नहीं बन सकता उसके लिये क्षत्रिय, वैश्य या विप्र बनने की चेष्टा अर्थहीन है।)

आनन्दमार्गियों को एक ही साथ विप्र, क्षत्रिय,

वैश्य और शुद्र बनना होगा।

(22) व्यवसायी :

(क) किसी को परिस्थिति के दबाव में डालकर तुम अपनी वस्तु खरीदने के लिये बाध्य मत करो।

(ख) मिलावटी वस्तुएँ मत बेचो ।

(ग) मिलावटी वस्तुएँ नहीं बेचने के

फलस्वरूप यदि व्यवसाय चलाना कष्टसाध्य जान पड़े तो उक्त वस्तु की खरीद-बिक्री एकदम बन्द कर दोगे एवं मिलावटी वस्तु का वितरण करने वाले का स्वभाव जब तक संशोधित न हो तब तक उसे क्षमा नहीं करोगे।

(घ) याद रखो तुम्हारे लिए वैश्योचित सेवा का ही सबसे अधिक सुयोग है।

(ङ) मार्ग की आर्त्त त्राण शाखा का भण्डार जिससे पूर्ण रहे, उस ओर विशेष नजर रखोगे ।

(23) विभिन्न प्रतिष्ठानों के कर्मचारी :

(क) अपने को जनसाधारण का सेवक समझो।

(ख) किसी भी हालत में न घूस लोगे और न दोगे ।

(ग) परिस्थिति के दबाव में डालकर यदि कोई घूस लेने या देने को बाध्य करे, तो जब तक उसका स्वभाव संशोधित नहीं हो जाता तब तक उसे क्षमा नहीं करोगे।

(घ) तुम्हारी पद मार्यादा के सम्मान में यदि कोई किसी प्रकार का उपहार दे तो उसकी गिनती घूस में होगी।

(24) गृहस्थ :

(क) यदि कोई आदरपूर्वक कुछ दे (पद-मर्यादा के सम्मान में नहीं) तो वह चाहे जितनी सस्ती वस्तु क्यों न हो, उसे सानन्द ग्रहण और व्यवहार करोगे।

(ख) सभी प्रकार की कल्याणमूलक प्रचेष्टाओं

में सरकारी गैर सरकारी सभी के साथ पूर्ण सहयोगिता करोगे ।

(ग) किसी को घूस मत दो, कोई अगर परिस्थिति के दबाव में डालकर घूस वसूल करता है तो जब तक उसके स्वभाव का संशोधन नहीं होता तब तक उसे क्षमा मत करो।

(घ) चिकित्सक के आपत्ति न करने पर उसका न्याय संगत प्राप्य अवश्य ही अदा कर दोगे ।

(25) चिकित्सक :

(क) अपनी सुविधा की अपेक्षा रोगी की सुविधा की ओर अधिक ध्यान दोगे।

(ख) रोगी की मृत्यु हो जाने पर उस समय की फीस नहीं लोगे।

(ग) मृतक के सभी पुत्र अगर नाबालिग हो तो बाकी लेना माफ कर दोगे।

(घ) मिलावटी दवाइयों का व्यवहार मत करो।

ऐसा न करने पर यदि व्यवसाय में क्षति की संभावना जान पड़े, तब उक्त औषधि की खरीद-बिक्री बन्द कर दोगे और मिलावटी औषधि के वितरक का स्वभाव जब तक संशोधित नहीं हो जाता तब तक उसे क्षमा मत करो।

(26) राजनैतिक कार्यकर्त्ता :

(क) किसी के लम्बे-चौड़े भाषण के भुलावे में मत पड़ो।

(ख) जिस दल की नीति मार्गीय आदर्श का विरोधी हो उसके साथ सम्पर्क मत रखों।

(ग) जिस दल की नीति मार्गसम्मत हो किन्तु कर्मधारा मार्गविरोधी हो, उसकी कर्म- धारा परिवर्तन के लिये सचेष्ट रहोगे।

(घ) जो यम-नियम में प्रतिष्ठित न हो वह जैसे किसी का भी नेतृत्व करने का सुयोग न पावे।

(ङ) स्वार्थी और कपटाचारी राजनीति को ही अपनी स्वार्थ सिद्धि का श्रेष्ठ यन्त्र समझते हैं। इसलिए राजनैतिक चर्चा के समय अत्यन्त सतर्कता के साथ और चतुर्दिक तीक्ष्ण दृष्टि रखते हुए आगे बढ़ोगे ।

(27) निर्वाचक मण्डली :

(क) किसी के लम्बे-चौड़े भाषण में मत भूलो, काम देखकर योग्यता का विचार करो।

(ख) स्मरण रहे, जो जिस अवस्था में है उसे उसी अवस्था में काम करने का यथेष्ठ सुयोग प्राप्त है।

(ग) जिसका स्वभाव यम-नियम विरोधी है उसे प्रतिनिधित्व का अवसर मत दो।

(घ) मात्र यम-नियम में प्रतिष्ठित व्यष्टि ही तुम्हारा समर्थन प्राप्त करने योग्य है किन्तु एकाधिक योग्य व्यष्टियों के रहने पर जो श्रेष्ठ कार्यकर्त्ता हो उसे ही निर्वाचित करो।

(ङ) अयोग्य व्यष्टि का समर्थन करने की अपेक्षा अपने मताधिकार का प्रयोग न करना ही श्रेयस्कर है - कारण, अयोग्य के हाथ में क्षमता दे देने का अर्थ है जान बूझकर समाज को विनाश की ओर ढकेल देना ।

(28) दण्ड विधान :

(क) अपराधी को पहले मीठी बातों से समझाओगे ।

(ख) इससे न समझे तो कड़ी बातों से समझाओगे।

(ग) उससे भी न समझे तो दण्ड देने की धमकी दोगे।

(घ) उस पर भी न मानने पर चौथे उपाय से उसे दण्डित करोगे ।

(29) अपराध का मात्रा भेद :

(क) मार्ग विरोधी कार्यकलाप, कपटाचरण, चोरी और नारी पर अत्याचार सबसे बड़ा अपराध है। ये महापातकी के रूप में गण्य होने योग्य हैं एवं इनके विरुद्ध पहले ही कठोर व्यवस्था दी जा सकती है।

(ख) जो अपराधी महापातकी नहीं है, निरस्त्र

रहने पर उस पर अस्त्रघात मत करो। उसके अकेला रहने पर एकाधिक व्यष्टि उस पर अस्त्राघात मत करो, क्षमा मांगने पर उसे क्षमा करो या न करो, प्रहार मत करो। पीछे से आघात मत करो। वृद्ध या शिशुओं के विरुद्ध कदापि कठोर दण्ड व्यवस्था मत दो।

(30) धर्म व्यष्टि और समष्टि जीवन के सभी स्तरों का वस्तु है। जो समझते हैं " धर्म व्यष्टिगत साधना पद्धति विशेष है" या "धर्म सम्पूर्णत: व्यष्टिगत विषय है" वे भूल करते हैं एवं यही भूलसामयिक अग्रगति को अवरुद्ध करती है।

(31) सेवा और सहिष्णुता :

(क) जनसेवा के क्षेत्र में सभी के साथ सहयोग करोगे ।

(ख) दूसरो की तरह असहिष्णु होकर दूसरे के प्रति कटूक्ति-वर्षन न करते हुए आनन्दमार्गी भावधारा का प्रचार करोगे।

(ग) मार्ग के व्यापक प्रचार के फलस्वरूप यदि कोई धर्मव्यवसायी आर्थिक संकट में पड़े तो उसकी अन्य प्रकार की जीविका संस्थापन के लिये यथासाध्य चेष्टा करोगे - चाहे वह मार्ग का व्यष्टि हो अथवा न हो।

(32) आनन्दमार्ग में कोई किसी का नौकर नहीं है। इसलिए कर्मधारा के अनुसार "**कृषि सहायक**' या "**पारिवारिक सहायक**" शब्द का व्यवहार करोगे। सहायकों का पालन सन्तान की तरह करोगे उनके सर्वात्मक विकाश की ओर नजर रखोगे उनके ईश्वर प्रणिधान का समय निर्धारित कर दोगे, प्रतिष्ठा प्राप्त करने में उन्हें सहायता करोगे, कभी भी उनकी उन्नति के पथ का काँटा मत बनो ।

(33) निराश्रिता नारी को विवाह कर पौरुष का परिचय दोगे; कभी भी उसे अवहेलित जीवन-यापन करने न दो ।

(34) "संगच्छव" मंत्र के तात्पर्य को समझो। दलबद्ध रूप में छोटी-बड़ी प्रत्येक समस्या का समाधान करोगे। एक की व्यथा को सबों की व्यथा, एक के आघात को सबों का आघात समझोगे। सभी प्रकार के निर्दोष, आनन्दानुष्ठानों में योगदान कर सकते हो। ईश्वराधना के नाम पर जो मूर्तिपूजा

को प्रश्रय देते हैं उनके आदर्श का नीतिगत रूप से समर्थन नहीं करते हो, इसलिए उसमें तुम लोग योगदान मत करो।

(35) पात्र या पात्री पक्ष से किसी दहेज का दबाव रहने पर उस विवाह में निमन्त्रित आनन्दमार्गीगण आवश्यकतानुसार शरीरश्रम कर देंगे इच्छा होने पर उपहार देंगे, किन्तु वहाँ अन्न-जल ग्रहण नहीं करेंगे।

(36) **प्रीतिभोज** - कोई यदि वास्तव में आन्तरिकता के साथ खिलाना चाहे तो उसके द्वारा शाकान्न दिए जाने पर भी उसे आनन्द के साथ ग्रहण करोगे किन्तु मात्र लोक-दिखावा के उद्धेश्य से कोई यदि भोजन के लिए आमन्त्रित करे तो उसका अन्न कदापि ग्रहण मत करो।

आपदन्न - जहाँ अन्न-जल के अभाव में जीवन विपन्न हो वहाँ खाद्याखाद्य या पात्रापात्र का कुछ भी विचार मत करो।

36

श्राद्धान्न - यह न तो प्रीतिभोज है और न आपदन्न ही है, इसलिए इसे ग्रहण करना अवधेय है।

(37) शर्त रखने का स्वभाव दोषपूर्ण है। लॉटरी और जुआ खेल का वर्जन किए चलोगे।

(38)

1. किसी को दण्ड देने के पहले यह देख लोगे कि उसके साथ तुम्हारा अच्छा सम्पर्क है या नहीं। जिसके साथ तुम्हारे अच्छे सम्पर्क न हों उसे दण्डित करने का कोई नैतिक अधिकार तुम्हें नहीं है।

2. सुधार के लिए दण्ड दोगे, कष्ट देने के लिए नहीं ।

3. दण्ड की मात्रा प्रीति-भाव का अतिक्रमण न करे ।

4. तुम्हारे किसी आचरण से यदि कोई निर्दोष व्यष्टि दुःखित हो जाए तो छोटे-बड़े का विचार किए बिना निष्कपट

भाव से तुम्हें उसके समझ क्षमा याचना करोगे। इससे तुम्हारे सम्मान में वृद्धि ही होगी।

(39) सभी से परामर्श लेने की चेष्टा करोगे। किन्तु जो परामर्श सर्वश्रेष्ठ हो उसे की ग्रहण करोगे। जिसका परामर्श ग्रहण करना संभव न हुआ, वह जिस आन्तरिक रूप से यह अनुभव करे कि वह तुम्हारे समक्ष, समाज के समक्ष तथा संस्था के समक्ष तुच्छ भी नहीं है, अवहेलित भी नहीं है।

(40) किसी को हठात् अच्छा या बुरा नहीं मान लोगे या अपना मन्तव्य प्रकाशित न करोगे। कारण तुम्हारे सिद्धांत या तुम्हारे मन्तव्य में सामान्य सी भी त्रुटि रहने पर, समाज की सामूहिक क्षति की संभावना है।

(41) स्मरण रखो, प्रत्येक मनुष्य के साथ तुम्हारा प्रेमपूर्ण सम्पर्क है, भय का सम्पर्क नहीं। जो तुमसे प्रेम रखता है, वह अवश्य ही तुम्हें मान्यता देगा।

(42) जो व्यष्टि सत् है उसका तनिक भी अहित मत करो
।

सूचीपत्र

विविध

(1) धर्मचक्र में और भोजन के समय सभी लोग अवश्य ही समान आसन में बैठोगे।

(2) भक्षण करने उद्देश्य से पशु-पक्षी की हत्या करने के पहले सैकड़ों बार सोचकर देखोगे कि उसकी हत्या किए बिना तुम जीवित रह सकते हो या नहीं।

(3) अस्त्र के द्वारा देश - जय किया जा सकता है, मन को जीता नहीं जा सकता। जो मन को जय करने की साधना में उतरा है वही साधक प्रकृत सैनिक है। विश्व-मन को जीतना

ही आनन्दमार्गी का ध्येय है। इसलिए उन्हें सैनिकोचित गुण अर्जित करना होगा। विशेषकर एकता और श्रृङ्खला बोध की ओर कड़ी नजर रखनी होगी। आनन्दमार्ग चर्याचर्य आनन्दमार्गियों के बीच भेद पैदा होने मत दो। अपने जीवन को विपन्न करके भी एकता की रक्षा करोगे। किसी भी कीमत पर व्यष्टि स्वार्थ को समष्टि स्वार्थ के सामने खड़ा होने नहीं दोगे ।

(4) विश्व के किसी भी सम्पद् का दुरुपयोग होने न दो, विशेष कर खाद्य, जलावन और जल का दुरुपयोग रोकने के लिए सर्वदा यत्नशील रहोगे।

(5) राजसिक की शक्ति तामसिक की अपेक्षा लाख गुणी अधिक और सात्विक की शक्ति राजसिक की अपेक्षा लाख गुणी अधिक है, इसलिए तुमलोग विश्व की किसी शक्ति का भय नहीं करोगे।

(6) याद रखो, विश्व के प्रत्येक मनुष्य के मार्ग के आदर्श को ग्रहण नहीं करने तक तुम्हारे लिए विश्राम का अवकाश नहीं है।

(7) दूसरे की अर्पित सम्पत्ति-रक्षा यत्नपूर्वक करोगे एवं वास्तविक अधिकारी को प्रत्यार्पित करने के

(8) लावारिस सम्पत्ति के लिए उसके वास्तविक

लिए हमेशा चेष्टा करोगे। अधिकारी की खोज करोगे और पुरस्कार लिए बिना उसे वापस कर दोगे। इस कार्य में सम्भव होने पर राष्ट्र-शक्ति की सहायता ले सकते हो। मालिक का पता न लगने पर यह सम्पत्ति राष्ट्र को या किसी जनहितकारी प्रतिष्ठान को दान कर दोगे । सम्पत्ति के सड़ जाने या दूसरे ढंग नष्ट या विकृत होने की सम्भावना जान पड़ने पर पाँच व्यष्टियों (एक आचार्य) के सामने उसे बेचकर उस रुपये के उपयोग की उसी प्रकार व्यवस्था करोगे।

(9) मार्ग की सेवा के लिए सर्वदा प्रस्तुत रहोगे। मार्ग के आदर्श के लिए जीवन विसर्जन करने के लिए भी कृपणता मत करो। याद रखो, महत् आदर्श की भावना लेकर प्राण त्याग करने पर, देहान्त में मोक्ष प्राप्ति अवश्यम्भावी है। धर्मयुद्ध में मृत्यु का यही पुरस्कार है।

(10) अनेकों उपदेश सुनने की अपेक्षा एक उपदेश को मानकर चलना बहुत बड़ी बात है। तुमलोग हर उपदेश को अपने जीवन में प्रतिफलित करोगे ।

सूचीपत्र

पञ्चदश शील

(1) क्षमा ।

(2) मन की उदारता ।

(3) आचरण और मिजाज पर नियन्त्रण ।

(4) आनन्दमार्ग के आदर्श के लिये सब कुछ त्याग करने के लिये प्रस्तुत रहना ।

(5) सर्वात्मक संयम ।

(6) मधुर और हँसमुख व्यवहार ।

(7) नैतिक साहस ।

(8) दूसरे को शिक्षा देने के पहले अपने जीवन में उसे कर दिखाना ।

(9) दूसरों की निन्दा करना, दूसरों की चर्चा करना, दूसरों पर कीचड़ उछालना तथा सभी प्रकार की दलबाजी से अलग रहना।

(10) यम-नियम को कठोरता पूर्वक मानकर चलना ।

(11) असावधानीवश अन्याय हो जाने पर तुरन्त उसे स्वीकार कर लेना तथा दण्ड की याचना करना ।

(12) किसी के द्वारा शत्रु की तरह व्यवहार किये जाने पर भी उसके प्रति घृणा क्रोध और दम्भ की भावना का त्याग करना।

(13) वाचलता से दूर रहना।

(14) अनुशासनिक नियमावली को मानकर चलना ।

(15) उत्तरदायित्व के बोध का परिचय देना ।

आचरण विधि

(1) दैनन्दिन जीवन में पञ्चदशशील का ठीक तरह से

पालन करना।

(2) चर्याचर्य (प्रथम खण्ड, द्वितीय खण्ड, तृतीय खण्ड) में निर्देशित शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक और सामाजिक जीवन की विधियों का अनुसरण और उदाहरण प्रस्तुत करना।

(3) अपने इष्ट, आदर्श, चरमनिर्देश और आचरण विधि की पवित्रता पर हर समय दृढ़ विश्वास और कठोर अनमनीय मनोभाव रखना।

(4) षोड़श विधि का कठोरतापूर्वक पालन करना (इसके अलावा गृही आचार्यों, सर्वकालिक कार्यकर्ताओं, स्थानीय पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं, स्थानीय अंशकालिक कार्यकर्ताओं, तात्त्विकों, आचार्य एवं अवधूतों की स्वतन्त्र आचरण-विधि है।)

षोड़श विधि

(1) पेशाब करने के बाद मूत्रद्वार को पानी से धो डालोगे ।

(2) पुरुष अपनी मूत्र नली के अग्र भाग की त्वचा

को हर समय पीछे की ओर खिसका कर रखेंगे।

(3) शरीर के सन्धि-स्थल के रोम कभी नहीं काटोगे।

(4) पुरुष हमेशा लंगोटा का व्यवहार करेंगे।

(5)व्यापक शौच-विधि का पालन करोगे।

(6) नियमित स्नान-विधि मानकर चलोगे।

(7) सात्विक आहार ग्रहण करोगे।

(8)नियमानुरूप उपवास करोगे।

(9) नियमित रूप से साधना करोगे

(10) परमाध्य इष्ट की मर्यादा-रक्षा के लिये अनमनीय कठोरता का पालन करोगे।

(11) आदर्श की पवित्रता-रक्षा के लिये अनमनीय कठोरता का पालन करोगे।

(12) आचरण-विधि-मानकर चलने के लिए अनमनीय कठोरता का पालन करोगे।

(13) चरम निर्देश की पवित्रता-रक्षा के लिए अनमनीय कठोरता का पालन करोगे।

(14) शपथ सर्वदा स्मरण रखोगे।

(15) स्थानीय जागृति के साप्ताहिक धर्मचक्र में नियमित योगदान, आवश्यक कर्तव्य के रूप में करोगे।

(16) सी.एस.डी.के. (आचरण-विधि, सेमिनार, कर्तव्य, कीर्त्तन) मानकर चलोगे।

सामाजिक आचार

(1) जिससे तुम सेवा प्राप्त कर रहे हो उसके प्रति धन्यवाद ज्ञापन करना चाहिये ('धन्यवाद - कहकर)।

(2) किसी के द्वारा नमस्कार किये जाने पर तुरन्त उसी मुद्रा में प्रति नमस्कार करना चाहिए।

(3) कोई वस्तु लेने या देने के समय निम्नलिखित 'मुद्रा' का व्यवहार करना चाहिए। बायें हाथ से दाहिनी केहूनी का स्पर्श करते हुए दाहिने हाथ को आगे बढ़ाओ।

(4) किसी सम्मानीय गुरुजन के आने पर उठकर खड़े जो जाना चाहिए।

(5) जम्हाई लेने के समय मुँह को हाथ से ढँकना चाहिए और साथ ही साथ अंगुलियों से चुटकी बजानी चाहिए।

(6) बातचीत करते समय जो अनुपस्थित हों उनके

सामाजिक आचार

प्रति हमेशा आदर सूचक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए।

(7) छींकने से पहले रुमाल या हाथ से मुँह को ढँक लेना चाहिए।

(8) नाक साफ करने के बाद हाथ धो लो। खाद्य वितरण करते समय छींकने या खाँसने में हाथों का प्रयोग करने पर तुरन्त हाथ धो लो ।

(9) पैखाना करने के बाद शौच के समय साबुन से हाथ साफ करो, पहले दाहिने हाथ से साबुन को रगड़ो, तब दाहिने हाथ से बाएँ हाथ को साफ करो

(10) बातचीत में रत लोगों के बीच आने के पूर्व उनसे आज्ञा प्राप्त कर लो ।

(11) रेल या मोटर गाड़ी अथवा जनसाधारण से यानवाहनों पर संस्था संबंधी बातचीत नहीं करना चाहिए।

(12) अनुमति प्राप्त किए जाने बिना किसी की वस्तु ग्रहण मत करो।

(13) दूसरों की कोई भी चीज बिना पूछे व्यवहार मत करो।

(14) बातचीत के समय किसी पर कर्कश या चोट लगने वाले शब्दों का प्रयोग मत करो, जो कुछ भी कहना हो अप्रत्यक्ष ढंग से कहो।

(15) दूसरों के दोषों और खामियों की आलोचना मत करो।

(16) कार्यालय के किसी अधिकारी से मिलने के पहले आज्ञा प्राप्त कर लो या उसके पास अपना परिचय-पत्र भेज दो अथवा मौखिक अनुमति प्राप्त कर लो।

(17) दूसरों के व्यष्टिगत पत्रों को नहीं पढ़ना चाहिए।

(18) वाद-विवाद के समय दूसरों को भी अपने मन्तव्य प्रकाशित करने का अवसर दो।

(19) दूसरों की बात सुनते समय बीच-बीच में हल्के प्रत्युत्तर देकर तुम ध्यानपूर्वक सुन रहे हो इस बात को प्रमाणित करते रहो।

(20) दूसरों से बात करते समय आँख या मुँह दूसरी और मत फेरो ।

(21) जमींदारी ठाठ से बैठकर मूर्खतापूर्ण ढंग से पैर

मत हिलाओं ।

(22) जिनसे तुम मिलने के लिये जाते हो उस समय अगर वे कुछ लिख रहे हों तो उनके पत्र की ओर मत देखो।

(23) अंगुलियों को बार-बार मुँह में मत डालो और दाँतों से भी नाखून मत काटो

(24) बातचीत के क्रम में अगर कोई बात समझ में न आवे तो विनय पूर्वक ‘कृपया क्षमा करें' कहो ।

(25) जब कोई तुम्हारे स्वास्थ्य और कल्याण के बारे में पूछे तो तुम्हें उन्हें धन्यवाद देना चाहिये।

(26) रात्रि के नौ बजे बजने के बाद किसी के घर अथवा किसी को बुलाने के लिए नहीं जाना चाहिए।

(27) यदि तुम्हें किसी को नकारात्मक उत्तर देना हो तो तुम्हें" क्षमा कीजिए" इन शब्दों का प्रयोग करना चाहिए ।

(28) भोजन करने के पहले हाथ और पैर धो लेना चाहिए।

(29) मधु खाना चाहो तो इसे पानी के साथ लो।

(30) भोजन करने वाले के सामने खड़े होकर बातचीत मत करो।

(31) खाद्य ग्रहण करने के लिए बैठ जाने पर, खाँसों या छींको मत ।

(32) बाएँ हाथ से किसी को खाद्य अर्पित मत करो।

(33) खड़े होकर स्नान मत करो या जल मत पियो।

(34) खड़े होकर पेशाब या पाखाना मत करो।

(35) जब बायी नाक (इड़ा नाड़ी) क्रियाशील हो तब तरल खाद्य ग्रहण करो और ठोस खाद्य तब ग्रहण करो जब दाहिनी नाक (पिंगला नाड़ी) प्रवाहिमान हो ।

(36) जब इड़ा नाड़ी चल रही हो तो इस समय को साधना में लगाना चाहिए।

(37) पेय वस्तु अर्पित करते समय गिलास को उसके निचले हिस्से में पकड़ना चाहिए।

(38) किसी को जल पिलाते समय पहले अंगुलियों से गिलास साफ करो, तब अंगुलियों की सहायता के बिना धोओ, तब उसे पानी से भरो।

(39) भोजन करने के समय अगर बहुत पसीना आता हो तो पसीने को रूमाल से पोंछना चाहिए।

समाप्त

**********X**********

घोषणा

लिंग, जाति, पंथ, धर्ममत, अमीर , गरीब आदि को विचार किए बिना सभी मनुष्यों को आध्यात्मिक साधना सीखने , अभ्यास करने और आध्यात्मिकता के मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए मार्गदर्शन प्राप्त करने का समान अधिकार है। अध्यात्मिक साधना विज्ञान को 'योग' भी कहा जाता है। योग के ज्ञान का कभी भी व्यावसायिक उद्देश्य के लिए उपयोग नहीं करना चाहिए। इसका वितरण नि:शुल्क होना चाहिए। यह साधना कोई भी आदमी "आनंद मार्ग प्रचारक संघ" के सन्यासियों और सन्यासिनीयों से किसी भी समय, नि:शुल्क सीख सकता है।

मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य परम शांति या आनंद का अनुभव करना है। केवल ईश्वर प्राप्ति के द्वारा ही आनंद प्राप्ति कर सकता है। योग साधना से ही ईश्वर

प्राप्ति संभव है; और कोई रास्ता नहीं है।